Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 13, Issue 2 | November 2025 - April 2026 | pp. 61-67

21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में नारीवादी दृष्टिकोण का प्रसार : कारण एवं महत्व

ISSN 2348-3857

श्रीमती अनिता मीना

सह आचार्य, राजनीति विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

21वीं सदी के इस आधुनिक युग में नारीवादी निगाहों से भारतीय नारी की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति एवं पितृसत्तात्मक समाज में समान अधिकार एवं स्वतंत्रता की मांग पर आधारित पश्चिमी नारीवादी आंदोलनों के समान भारत में नारीवाद से प्रेरित आंदोलनों पर यदि मंथन किया जाए तो भारतीय इतिहास में आज तक ऐसा कोई उदाहरण प्राप्त नहीं होता है क्योंकि आज़ादी से पूर्व स्त्रियों को भारतीय समाज में शिक्षा के अधिकार से पूर्णतः वंचित रखा गया और आज़ादी के बाद यद्यपि भारतीय संविधान द्वारा उन्हें समान अधिकार एवं स्वतंत्रताएं प्रदान की गई किंतु वास्तविक धरातल पर स्थितियाँ 20वीं सदी के अंतिम दशकों तक लगभग जस की तस ही थी। फिर भी यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि 21वीं सदी की आधुनिक भारतीय नारी ने परंपराओं में जकड़ी भारतीय स्त्री का चोला अब उतारकर फेंक दिया है और वह देश और दुनिया की प्रगति में अपना योगदान देने लगी है। भारतीय समाज में उच्च शिक्षा में स्त्रियों की भागीदारी में बहुत वृद्धि होने लगी है और बहुसंख्या में स्त्रियाँ काम हेतु न सिर्फ़ घर से बाहर निकलने लगी हैं वरन् अपनी स्वतंत्र पहचान एवं अस्तित्व के लिए संघर्ष करने लगी है। निश्चित रूप से इसका प्रभाव भारत के हिंदी सिनेमा में अभिनीत नारी पात्रों पर भी पड़ा और अविश्वनीय रूप से नारीवाद से प्रेरित हिंदी सिनेमा का आगमन भारत में हुआ। प्रस्तुत शोध पत्र में चिंतन किया गया हैं कि नारीवाद से प्रेरित होकर 21वीं सदी में जिन फ़िल्मों का निर्माण किया गया है, उन फिल्मों के प्रभाव के कारण भारत की नारी आज जागरुक होने लगी हैं और अपने अधिकार एवं लैंगिक समानता के लिए आवाज़ उठाने लगी हैं।

संकेताक्षर—*नारीवाद, हिंदी सिनेमा में नारीवादी स्त्री विमर्श, स्त्री स्वायत्तता, पितृसत्तात्मक समाज*

प्रस्तावना

भारतीय समाज के परंपरागत सांचे अनुसार शुरुआती दशकों की फ़िल्मों में भारतीय नारी को आदर्शमयी, पतिव्रता एवं चरित्र की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने वाली स्त्री के रूप में दर्शाया गया था, किंतु 21वीं सदी तक आते-आते हिंदी फिल्मों में स्त्री पात्रों का चित्रण अब ममत्व, प्रेम, त्याग या पारिवारिक संबंधों तक सीमित नहीं रह गया हैं। आज की नारी भारतीय सामाजिक परम्पराओं के विपरीत पुरुषों के कर्मक्षेत्र में भी प्रवेश करने लगी हैं। अब वे स्वयं की पहचान, आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और पितृसत्तात्मक समाज में सदियों से स्त्री के प्रति सामाजिक व राजनीतिक असमानताओं के विरुद्ध मुखर होकर सामने आने लगी है। दूसरे शब्दों में जहां पुरानी हिंदी फिल्मों के नारी पात्र संतान, पति और परिवार के प्रति पूर्णतः समर्पित होकर अपने अस्तित्व को विलीन करने में ही नारी जीवन की सार्थकता समझते थे, वहीं 21वीं सदी की हिंदी फिल्मों के नारी पात्र अपनी अलग पहचान और अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए समाज के पारंपरिक मूल्यों के विरुद्ध मुखरता से आवाज़ उठाने लगे है। संक्षेप में कहें तो 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा के स्त्री पात्र शुद्ध नारीवाद से प्रेरित पश्चिमी सिद्धांतों का प्रतिनिधित्व करने

लगे हैं। भारतीय समाज में यह युगांतरकारी परिवर्तन पश्चिमी नारीवादी आंदोलन, शिक्षा, विशाखा गाइड लाइंस के अनुसार कामकाजी महिलाओं हेतु निर्मित कानून एवं डिजिटल क्रांति के प्रभावों के परिणामस्वरूप स्त्री के पक्ष में बनाए गए कानूनों एवं सामाजिक जागरुकता के कारण ही संभव हो पाया है। 21वीं सदी की नारी नायक के सहयोगी किरदार में ही नहीं, बल्कि स्वयं कथा की धुरी बनने की ओर अग्रसर है। यद्यपि पितृसत्तात्मक समाज के मूल्यों की प्रधानता आज भी कायम है, पर वक्त की आंधी ने पितृसत्तात्मक समाज की आभा को बहुत मद्धिम कर दिया है। 21वीं सदी के हिन्दी सिनेमा में इस बदलाव को बख़ूबी दिखाया जा रहा हैं। आज की नारी निर्णय में सक्षम, आत्म सम्मान की रक्षा के लिए प्रतिरोध दर्शाने वाली और पुरुष सत्तात्मक समाज की पारंपरिक रूढ़ियों और मान्यताओं को चुनौती देने वाली हैं। 21वीं सदी की फिल्मों में चित्रित नारी ने "आदर्श नारी" के चोले को एक तरह से उतारकर ही फेंक दिया हैं। "गुलाब गैंग" जैसी फिल्मों में तो वह नेतृत्व करने वाली भूमिकाओं में हैं और 'डर्टी पिक्चर', 'थप्पड़', 'पिंक', 'क्वीन', 'अस्तित्व' जैसी फिल्मों में वह पुरुष सत्तात्मक समाज एवं मान्यताओं के प्रति स्पष्ट विरोध दर्ज करा रही हैं। ये फिल्में न सिर्फ़ स्त्रियों को जागृत कर रही हैं, वरन् पश्चिमी नारीवादी अवधारणा का भारत में प्रतिनिधित्व भी कर रही हैं। भारतीय सामाजिक परम्पराओं की दृष्टि से नारी पात्रों में यह बदलाव एक प्रकार से इंकलाबी भावनाओं को लिए हुए हैं।

साहित्य की भांति सिनेमा भी समाज का दर्पण होता है। यही कारण है कि 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में अपनी पहचान, सम्मान एवं पुरुष समान अधिकारों के लिए स्त्री की तड़प, उसकी घुटन और संघर्ष को बखूबी दर्शाया जाने लगा है। 2024 की हिंदी फिल्म 'थप्पड़' एवं 2025 में रिलीज़ हुई हिंदी फ़िल्म 'मिसेज' में पारिवारिक मूल्यों पर जीवन अर्पण करने वाली एक घरेलू स्त्री के खामोश विद्रोह एवं उबलते हुए जज़्बातों को बड़ी खूबसूरती से दर्शाया गया है। पितृसत्ता, भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति एवं धार्मिक व सामाजिक परम्पराओं के बीच के अन्तर्द्वन्द को ये फ़िल्में गहराई से दर्शाती है। फ़िल्म का संदेश परम्परागत भारतीय समाज की धारणाओं के बिल्कुल विपरीत और 21वीं सदी की स्त्री की नारीवादी दृष्टि के नज़दीक है कि एक स्त्री का मूल्य इस बात से निर्धारित नहीं होता कि वह दूसरों की सेवा में अपने व्यक्तित्व का समर्पण किस हद तक करती है बल्कि उसका प्रथम दायित्व नारी होने के नाते स्वयं के स्वाभिमान एवं सम्मान की रक्षा करना है। महिलाएँ पुरुषों के जीवन में सिर्फ़ सहायक पात्र नहीं है। वह स्वयं अपने में सम्पूर्ण और स्वतंत्र है। फ़िल्म प्रत्येक व्यक्ति के लिए आत्मचिंतन की मांग करती हुई प्रतीत होती है। अतः यह चिंतनीय हैं कि आख़िर ऐसी कौनसे कारण रहे हैं, जिनके कारण 21वीं सदी की आधुनिक हिंदी फ़िल्मों में अभिनीत नारी पात्र अपने अधिकारों एवं अस्तित्व हेतु इतने जागरुक होने लगे हैं।

21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में नारीवादी क्रांति के कारण

21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में स्त्री सशक्तीकरण एवं नारीवाद के आगमन के पीछे अनेक सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक, सांस्कृतिक और वैचारिक कारण रहे हैं। इन्हें निम्नलिखित बिंदुओं में विस्तार से समझा जा सकता है—

सामाजिक चेतना एवं नारीवादी आंदोलनों का प्रभाव— पहले स्त्री को परिवार और समाज में परंपरागत भूमिकाओं तक सीमित रखा जाता था। वह त्याग और सहनशीलता के आदर्शों को जीवन का मूल आधार समझती थी। पश्चिमी नारीवादी आंदोलनों के प्रभाव के कारण भारत में भी स्त्रियों की समानता, स्वतंत्रता और आत्मसम्मान के प्रश्नों को समाज के समक्ष मुखर रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा। आज की स्त्रियां अपने दर्द और अपनी पीड़ा को मौन रहकर सहती नहीं हैं, बल्कि अपने असंतोष को मुखर होकर अभिव्यक्त भी करने लगी हैं। निश्चित रूप से इसका प्रभाव सिनेमा पर भी पड़ा। यही कारण हैं कि 21वीं सदी की फिल्मों में स्त्री को 'त्याग एवं करुणा की मूर्ति' के स्थान पर 'सजग नागरिक' के रूप में चित्रित किया जाने लगा हैं।

भारतीय दंड संहिता में सम्मिलित कानूनी प्रावधानों का प्रभाव—20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में घरेलू हिंसा, दहेज़ हत्या और कार्यस्थलों पर स्त्रियों के उत्पीड़न संबंधी बढ़ते हादसों के कारण भारतीय दंड संहिता (IPC) में ऐसे अनेक कानूनी प्रावधान जोड़े गए, जिनका उद्देश्य स्त्रियों की सुरक्षा, सम्मान और अधिकारों की रक्षा करना है। धारा 354 स्त्री की लज्जा भंग करने से संबंधित अपराधों को दंडनीय बनाती है, वहीं धारा 354A-D कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, पीछा करना

(स्टॉकिंग) और छेड़छाड़ जैसे अपराधों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करती है। धारा 375 और 376 के अंतर्गत बलात्कार की परिभाषा को व्यापक बनाया गया, जिससे स्त्री की सहमति को केंद्रीय महत्व मिला। दहेज उत्पीड़न से संबंधित धारा 498A ने विवाहित स्त्रियों को कानूनी संरक्षण में बढ़ोतरी का कार्य किया। इसके अतिरिक्त, घरेलू हिंसा और एसिड अटैक (धारा 326A, 326B) जैसे अपराधों पर कठोर दंड का प्रावधान भी किया गया। विशाखा गाइड लाइंस द्वारा सर्वोच्च न्यायालय ने कार्यस्थलों हेतु महिलाओं की सुरक्षा हेतु कुछ दिशा निर्देश जारी किए, जिनके आधार पर भारत की संसद ने लैंगिक उत्पीड़न के ख़िलाफ़ ऐतिहासिक कानून पारित किया। पुरानी हिंदी फिल्मों की तुलना में 21वीं सदी के आधुनिक हिंदी सिनेमा में अभिनीत स्त्री पात्रों के व्यक्तित्व में युगांतरकारी बदलाव देखने को मिलता हैं।

शिक्षा में वृद्धि से स्त्रियों में जागरुकता का प्रसार—शिक्षा में वृद्धि ने स्त्रियों को जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। शिक्षित स्त्रियाँ भारतीय दंड संहिता में उपलब्ध कानूनी प्रावधानों का उपयोग कर सदियों से पितृसत्तात्मक समाज द्वारा किए जाने वाले भेदभावों एवं अन्यायों के ख़िलाफ़ आत्मसम्मान की रक्षा हेतु आवाज़ उठाने लगी हैं। आज की शिक्षित स्त्रियाँ अपने अधिकारों, निर्णय-क्षमता और आत्मनिर्भरता हेतु प्रयत्नशील हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि पुरुष को अपना स्वामी अथवा परमेश्वर मानने वाली स्त्रियाँ 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में जैसे लुप्त सी हो गई हैं। स्पष्ट रूप में कहा जा सकता हैं कि 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में चित्रित नारी पात्रों के चरित्र में पुरानी हिंदी फ़िल्मों के मुकाबले युग-निर्माणकारी परिवर्तन आ चुका हैं, जो कि सदियों से संभव नहीं हो पाया था। आधुनिक 21वीं सदी का हिंदी सिनेमा उसके इस व्यक्तित्व को बख़ूबी दिखा रहा हैं।

वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के दौर का प्रभाव— वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के दौर ने भारतीय समाज को नए विचारों और नवीन जीवन-शैलियों से जोड़ दिया है। अंतरराष्ट्रीय सिनेमा, मीडिया, बहु राष्ट्रीय कंपनियों का भारत में प्रवेश हुआ। इन सबके परिणामस्वरूप मानवाधिकार एवं लैंगिक समानता पर आधारित नारीवादी विचारधारा का भारतीय समाज में प्रवेश हुआ, जिससे स्त्री के सम्मान एवं अधिकारों को लेकर जागरुकता का प्रसार हो रहा हैं। संचार क्रांति ने स्त्रियों को अपनी बात रखने का मंच प्रदान किया और पितृसत्तात्मक समाज की परंपरागत रूढ़ियों को भारतीय स्त्रियां भी अब चुनौती देने लगी हैं। संचार क्रांति ने गांव एवं शहर की सांस्कृतिक दूरियों को भी मिटा दिया है और पूरा विश्व ही अब गांव तुल्य हो गया है। अतः आज भारत की नारी परंपराओं से दूर जाकर स्त्री सशक्तीकरण एवं नारीवाद की बात करने लगी हैं। स्त्री की इस स्वतंत्र पहचान और नारी अस्मिता जैसे विषयों को 21वीं सदी का हिंदी सिनेमा सम्मानपूर्वक दर्शाने भी लगा है।

स्त्री निर्देशकों, लेखिकाओं और कलाकारों की भागीदारी में वृद्धि—21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में महिला निर्देशकों, पटकथा लेखिकाओं और अभिनेत्रियों द्वारा सशक्त योगदान दिया जा रहा है। उनकी लेखन शैली, निर्देशन, अभिनय कौशल, एवं स्त्री केंद्रित विषयवस्तु ने फिल्मों में स्त्री आधारित कहानियों एवं स्त्री मनोविज्ञान को प्रामाणिकता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। स्त्री रचनाकारों ने फिल्मी कहानियों को पुरुष-केंद्रित विषयों से निकालकर स्त्री अनुभवों, संवेदनाओं और संघर्षों के यथार्थ चित्रण की तरफ़ मोड़ दिया है। 21वीं सदी की फ़िल्मों में अभिनीत स्त्री पात्र अब सिर्फ़ शो पीस बनकर नहीं आ रहे हैं। स्त्री के अंदर के जज़्बात प्रतिरोध का रूप लेकर समाज के समक्ष प्रस्तुत हो रहे हैं। स्त्री निर्देशकों एवं कहानीकारों ने घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, मातृत्व, विवाह, तलाक़, विधवा विवाह और कार्यस्थलों की चुनौतियों को पर्दे पर प्रामाणिकता एवं संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। मीरा नायर (सलाम बॉम्बे, मानसून वेडिंग), जोया अख्तर (गली बॉय, दिल धड़कने दो), मेघना गुलज़ार (राजी, छपाक, तलवार), नंदिता दास (फ़िराक, मंटो) गौरी शिंदे (इंग्लिश विंग्लिश, डियर ज़िंदगी), आरती कदव (मिसेज) लीना यादव (पार्च्ड) जैसी महिला निर्देशकों एवं अन्विता दत्त (क्वीन, शानदार) अलंकृता श्रीवास्तव (लिपस्टिक अंदर माई बुर्का), लीना यादव (पार्च्ड) जैसी पटकथा लेखिकाओं तथा विद्या बालन (द डर्टी पिक्चर, कहानी), तापसी पन्नू (पिंक, थप्पड़), दीपिका पादुकोण (छपाक, पिकु) आलिया भट्ट (राजी, गली बॉय, गंगुबाई काठियावाड़ी, डियर जिंदगी), कंगना रनौत (क्वीन, पंगा, तनु वेड्स मनु) जैसी अभिनेत्रियों के हिंदी फिल्मों में प्रभावशाली योगदान ने हिंदी सिनेमा जगत की तस्वीर ही बदल दी है। इन स्त्रियों की सक्रिय भागीदारी

ने 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा को अधिक संवेदनशील, यथार्थवादी और नारीवादी दृष्टि से अधिक समृद्ध कर दिया है।

पितृसत्तात्मक सोच के प्रति नारी का प्रतिरोध—शिक्षा के अभाव और पुरातन मान्यताओं ने स्त्री को हमेशा पुरुष की अधीनता की स्थिति में ही रखा हैं। न सिर्फ़ अधीनता वरन् भारत की नारी ने तो पुरुष (पति) को अपना परमेश्वर और स्वयं को उसकी पुजारिन ही माना है। शुरुआती दशकों की फिल्मों में उसका यही स्वरूप नज़र आता है किंतु वक्त बदला और शिक्षा, जागरुकता, आत्मनिर्भरता और नारीवादी विचारधारा के भारत में प्रवेश के परिणामस्वरूप भारतीय स्त्री ने अपने अधिकारों, आत्मसम्मान एवं अपने अस्तित्व की खोज आरम्भ की और इस ख़ोज के साथ ही उसने पुरुषसत्तात्मक समाज का मुखरता से प्रतिरोध करना भी आरम्भ किया, जिसको 21वीं सदी की फ़िल्मों में स्पष्टता से दिखाया जाने लगा है। अब हिंदी फिल्मों का वह दौर भी अतीत का हिस्सा बन चुका हैं, जब महिला निर्देशकों एवं महिला कहानीकारों का अभाव था और पुरुष नज़रिए से ही फ़िल्मों का निर्माण होता था। 21वीं सदी की आधुनिक हिंदी फिल्मों में विवाह, तलाक़, मातृत्व, यौनिकता, घरेलू हिंसा दहेज़ समस्या और स्त्री देह से जुड़े रूढ़िवादी दृष्टिकोणों को चुनौती दी जाने लगी है। अपने शोषण एवं अन्याय पर मौन रहने के स्थान पर अब वह पुरुषवादी समाज से प्रश्न भी करने लगी हैं और उसके इस बदलते स्वर की गूंज 21वीं सदी की फ़िल्मों में स्पष्टता से सुनी जा सकती हैं।

यथार्थपरक सिनेमा के प्रति दर्शकों का बढ़ता आकर्षण—आज का दर्शक सिनेमा को केवल मनोरंजन का साधन नहीं मानता हैं, बल्कि समाज की यथार्थ समस्याओं पर बनी फिल्मों को देखना पसंद करता है। यथार्थपरक सिनेमा में स्त्री विमर्श, पारिवारिक तनाव, मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक अन्याय जैसे विषयों को ईमानदारी से प्रस्तुत किया जाता है। यही कारण है कि शिक्षित और युवा दर्शक अब यथार्थ स्त्री पात्रों से सजी फ़िल्मों को स्वीकार करने लगा है। आज का युवा कल्पनालोक में विचारण नहीं करता है, बल्कि यथार्थ से प्रेरित आस पास की कहानियाँ पर्दे पर देखना चाहता है। यही कारण हैं कि 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में नारी और नारीवाद से प्रेरित फिल्मों का निर्माण बहुतायत से होने लगा है और वह सफल भी हो रही हैं।

डिजिटल प्लेटफार्म एवं सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव—सोशल मीडिया और ओटीटी प्लेटफार्म ने साहसिक एवं स्त्री विमर्श से संबंधित विषयों को मंच देकर घर घर तक पहुंचा दिया है। पारंपरिक सिनेमा और टेलीविजन की अपनी सीमाएं होती हैं, किंतु इन सीमाओं से परे ओटीटी प्लेटफार्म स्त्री जीवन की जटिल एवं वास्तविक संघर्षों को अधिक साहसिक एवं प्रमाणिक रूप से प्रस्तुत कर रहा है। यहां के स्त्री पात्र आदर्शवादी नहीं हैं बल्कि यथार्थवादी नज़र आते हैं और अनेक मोर्चों पर समाज से लड़ते हुए दिखाई देते हैं। स्त्री विमर्श संबंधी विषयों पर यहां व्यापक मंथन होने लगा है। ओटीटी प्लेटफार्म एवं सोशल मीडिया पर स्त्री विमर्श को एक नई दिशा और व्यापक अभिव्यक्ति प्राप्त हुई हैं, जिससे नारीवादी आंदोलन को एक विशिष्ट ही प्रेरणा प्राप्त होने लगी हैं। स्त्री निर्देशकों एवं लेखिकाओं ने स्त्री मन को इन कहानियों के माध्यम से बहुत ही संवेदनशीलता से प्रस्तुत किया है। ओटीटी प्लेटफार्म सच्चे अर्थों में नारीवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व कर रहा हैं। जिनमें दिल्ली क्राइम्स (अभिनेत्री-शेफाली शाह), बॉम्बे बेगमस (पूजा भट्ट एवं शाहना गोस्वामी), आर्या (सुष्मिता सेन) महारानी (हुमा कुरैशी) आदि सीरीज मुख्य हैं।

हिन्दी सिनेमा में नारीवाद एवं स्त्री विमर्श

श्वेत श्याम फिल्मों की पति परमेश्वर रूपी अवधारणा से स्त्री पात्र मुक्त होकर आज नारीवाद की अवधारणा तक पहुंच चुके हैं। 21वीं सदी की फ़िल्मों के नारी पात्र पुरुष से पृथक् अपना अस्तित्व समझते हैं और हर क्षेत्र में पुरुषों के समान अधिकार एवं स्वतंत्रता की मांग रखने लगे हैं। पुरानी एवं नई विभिन्न फिल्मों के संवादों का परीक्षण करते हैं, तो हिंदी सिनेमा में अभिनीत नारी पात्रों का यह सफ़र अविश्वसनीय लगता है। 21वीं सदी की फिल्मों में नारीवाद के आगमन रूपी यह मंज़िल अति सुखांतकारी है। निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्त्री चेतना, स्त्री विमर्श एवं नारीवाद के महत्व को विस्तार से समझा जा सकता है—

हिंदी सिनेमा में अभिनीत स्त्री पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का आलोचनात्मक विश्लेषण—हिंदी

सिनेमा के आरम्भिक काल में जहां स्त्री को आदर्शमयी, त्यागमयी, ममतामयी एवं पति परमेश्वर की अवधारणा एवं पितृसत्तात्मक समाज में अधीनस्थ की स्थिति में समझा गया था, वहीं समय के साथ जो युगांतरकारी परिवर्तन हुए और नारीवादी विचारधारा के सिद्धांतों का हिंदी सिनेमा में प्रवेश हुआ, उसके परिणामस्वरूप 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में स्त्री को सशक्त एवं पुरुष प्रभुत्व के समस्त क्षेत्रों में अपनी योग्यता एवं क्षमताओं का प्रदर्शन करते हुए दिखाया जाने लगा हैं। अधीनस्थ की स्थिति से आत्मसम्मान की प्राप्ति के इस सम्पूर्ण फिल्मी यात्रा पर विचार करना अपने आप में बहुत अद्भुत हैं। यद्यपि समकालीन सिनेमा में भी बाजारवाद के प्रभाव से स्त्री को कभी-कभी सजावटी वस्तु की भांति प्रस्तुत किया जाता है।

पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना को पूर्णतः जानने एवं समझने का माध्यम—यह शोध पत्र हिंदी सिनेमा में अभिनीत नारी पात्रों के विश्लेषण के माध्यम से पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना को गहराई से जानने समझने का प्रयास करता है। यह शोध पत्र फ़िल्मों द्वारा समाज में व्याप्त उन ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संरचनाओं का विश्लेषण करता हैं, जिनके माध्यम से पुरुष वर्चस्व को समाज में स्वीकार्यता प्राप्त हुई। इस प्रकार प्रस्तुत शोध पत्र समाज में निहित पितृसत्तात्मक सोच, लैंगिक भेदभाव और पुरुष वर्चस्व को उजागर करता हैं। साथ ही, 21वीं सदी के सिनेमा में उभरते नारीवादी दृष्टिकोण के माध्यम से पितृसत्ता के प्रति प्रतिरोध, प्रश्नाकुलता और परिवर्तन की संभावनाओं को भी रेखांकित करता है। इस प्रकार यह शोध पत्र पितृसत्तात्मक व्यवस्था की जड़ों, प्रभावों एवं चुनौतियों को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

फ़िल्मों में नारीवादी स्त्री विमर्श द्वारा सामाजिक यथार्थ का प्रतिपादन—यह शोध पत्र हिंदी फिल्मों में नारीवादी स्त्री विमर्श के माध्यम से स्त्रियों की दशा एवं दिशा पर सामाजिक यथार्थ का प्रभावी मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। साहित्य की भांति फ़िल्में भी समाज का दर्पण होती हैं। दृश्य एवं श्रव्य दोनों विधाओं से सम्पन्न होने के कारण सिनेमा साहित्य से अधिक प्रभावी बन जाता है। यह अध्ययन दर्शाता है कि फिल्में केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि समाज का आधा भाग अर्थात् स्त्री की वास्तविक स्थिति, संघर्ष, शोषण, प्रतिरोध को अभिव्यक्त करने का भी सशक्त माध्यम है। आज का हिंदी सिनेमा पितृसत्तात्मक मूल्य और लैंगिक असमानता, घरेलू और सामाजिक हिंसा, स्त्री देह और पहचान से जुड़े समस्त प्रश्नों को उजागर करता है। प्रस्तुत शोध यह भी दर्शाता है कि फिल्मों में प्रस्तुत नारीवादी विमर्श समाज में जागरुकता उत्पन्न करने और वैचारिक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार यह शोध सिनेमा और समाज के अंतर्संबंध को सार्थक रूप में स्थापित करता है।

लैंगिक समानता पर आधारित समाज की स्थापना की आवश्यकता का प्रतिपादन—यह शोध लैंगिक समानता पर आधारित समाज की स्थापना की अनिवार्यता पर बल देता है। अध्ययन द्वारा स्पष्ट होता है कि पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था ने स्त्री की योग्यताओं को नजरअंदाज कर उसका शोषण ही किया है, जो कि मानवाधिकार, सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक मूल्यों एवं प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत है। हिंदी सिनेमा में अभिनीत स्त्री पात्रों का नारीवादी दृष्टि से अध्ययन करते हुए यह शोध पत्र दर्शाता है कि किस प्रकार भारत में लैंगिक भेदभाव को सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्वीकृति प्राप्त हुई हैं और इस अन्याय को समाज के प्रत्येक वर्ग एवं जातियों में सामान्य आचरण के रूप में मान्यता भी प्राप्त हुई हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में यह संदेश भी निहित है कि लैंगिक समानता का व्यवहार सिर्फ़ स्त्रियों के सशक्तीकरण तक सीमित नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज के संतुलित विकास के लिए आवश्यक हैं। शोध पत्र यह भी संकेत देता है कि स्त्रियों को पुरुषों समान शिक्षा, अवसर, निर्णय में भागीदारी एवं सम्मानजनक प्रतिनिधित्व दिए बिना देश और दुनिया का विकास संभव नहीं हैं। इस प्रकार यह अध्ययन एक आदर्श न्यायपूर्ण और मानवतावादी समाज का सपना भी शोध के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत करता हैं।

स्त्री की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक भूमिका के महत्व का प्रतिपादन—यह शोध पत्र स्त्री की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक भूमिका के महत्व को फिल्मों में अभिनीत नारी पात्रों के चारित्रिक विश्लेषण की व्याख्या के माध्यम से प्रस्तुत करता है। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि विभिन्न कालखंडों में स्त्री की भूमिका किस प्रकार परंपरागत सीमाओं में बंधी रही किंतु कैसे समय के साथ सामाजिक एवं कानूनी चेतना, शिक्षा, औद्योगीकरण, वैश्वीकरण, उदारीकरण और नारीवादी विचारधारा के प्रभाव से स्त्री चेतना का

विकास हुआ और समाज के विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में वह अपनी दमदार उपस्थिति दर्शाने लगी। 21वीं सदी में नारीवादी विचारधारा से प्रभावित हिंदी फिल्मों के निर्माण से यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता हैं कि आज की स्त्री बुद्धि, योग्यता और क्षमताओं में किसी भी प्रकार से पुरुषों से कमतर नहीं हैं। यही कारण हैं कि 21वीं सदी की फ़िल्मों में अभिनीत स्त्री पात्र सशक्त, निर्णयकर्ता और सशक्त नारी की भूमिका में प्रस्तुत होने लगे हैं। इस प्रकार शोध पत्र स्त्री भूमिका को समग्रता में रेखांकित करता है।

नारीवादी विचारधाराओं के प्रसार का माध्यम—यह शोध पत्र भारत में नारीवादी विचारधाराओं के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में स्त्री की स्थिति दयनीय ही रही हैं। यहां तक कि एक दौर सती प्रथा का भी था, जब उसको अपने पति की चिता के साथ उसे जिंदा तक जला दिया जाता था। पति के समक्ष उसकी स्थिति किसी दासी के ही तुल्य समझी जाती थी। यद्यपि पुरानी फ़िल्मों में नारी की सामाजिक स्थिति में सुधार के कुछ प्रयास अवश्य आरंभ हुए किंतु वह पर्याप्त नहीं थे क्योंकि उस दौर में फ़िल्म का उद्देश्य शुद्ध मनोरंजन मात्र ही समझा जाता था। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध तक आते-आते उदारीकरण के दौर में भारतीय समाज दुनिया की खुली सोच के संपर्क में आया और समाज में नारीवादी स्त्री विमर्श पर विचारों का आदान प्रदान होने लगा। 21वीं सदी की फ़िल्मों में नारी पात्रों के माध्यम से उन विचारों को मूर्त रूप भी प्रदान किया जाने लगा और पितृसत्तात्मक समाज के ख़िलाफ़ एवं नारीवादी स्त्री विमर्श के पक्ष में फिल्मों का निर्माण होने लगा। स्त्री निर्देशकों, लेखिकाओं एवं अभिनेत्रियों ने नारी दर्द को पर्दे पर जीवंत करना आरंभ किया। इस प्रकार शोध पत्र अकादमिक जगत के साथ-साथ समाज में नारीवादी विचारधाराओं के प्रभावी प्रसार का माध्यम हैं। यह शोध पत्र समाज को समानतामूलक सामाजिक संरचना की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा भी देता है।

सामाजिक समस्याओं के निराकरण में सिनेमा के योगदान का प्रतिपादन—शोध पत्र यह स्पष्ट करता है कि सिनेमा केवल मनोरंजन का नहीं, बल्कि सामाजिक समस्याओं के चिंतन एवं निराकरण में भी उपयोगी हैं। आज नारी ने जो प्रगति के सोपान तय किए हैं, उसमें नारीवादी स्त्री विमर्श पर आधारित फिल्मों के निर्माण का भी बहुत बड़ा योगदान है। यदि नारी शिक्षित और विभिन्न क्षेत्रों में कामयाब होगी, तो निश्चित रूप से समाज, देश और दुनिया में सकारात्मक बदलाव आयेंगे क्योंकि स्त्री के नैसर्गिक गुणों ने इस दुनिया को सुन्दर बनाने में हमेशा योगदान दिया है। जिस समाज में स्त्री को दासी एवं पुरुष को स्वामी समझा गया, उस समाज की स्त्री विरोधी इन कुरीतियों को सिनेमा में न सिर्फ़ दिखाया गया, वरन् नारीवाद की दृष्टि से स्त्री विमर्श पर उच्च कोटि की फिल्में बनाकर स्त्रियों को आगे बढ़ने हेतु प्रेरित भी किया है। 21वीं सदी में इसके सकारात्मक परिणाम यत्र तत्र देखे जा सकते हैं। फ़िल्मों में नारीवादी स्त्री विमर्श पर आधारित यह शोध पत्र यह समझने में भी सहायक होता है कि समस्त सामाजिक कुरीतियों से समाज को यदि मुक्त करना हैं, तो कानून, सोशल मीडिया, संचार क्रांति एवं आधुनिक सोच का प्रतिनिधित्व करने वाले सिनेमा को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। थप्पड़, पिंक, पार्च्ड, गुलाब गैंग, क्वीन, छपाक, हाइवे, दंगल, पंगा और मैरी कॉम आदि फ़िल्मों का भारतीय समाज द्वारा खुले दिल से स्वीकार किया जाना अपने आप में सामान्य नहीं हैं।

स्त्री अस्मिता एवं स्त्री स्वायत्तता की दृष्टि से महत्वपूर्ण—स्त्री अस्मिता और स्त्री स्वायत्तता की दृष्टि से भी यह शोध पत्र अति महत्वपूर्ण हैं। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से स्त्री के आत्मसम्मान के अधिकार, स्त्री यौनिकता, स्त्री पुरुष सम्बन्धों में सहमति, लैंगिक समानता एवं स्वतंत्रता के प्रश्नों को उठाया गया है, जो कि समाज में स्त्री विमर्श की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण बात है। 21वीं सदी की फ़िल्मों में अभिनीत स्त्री पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं एवं संवादों से स्पष्ट होता हैं कि आज स्त्री की पहचान केवल पारंपरिक भूमिकाओं तक सीमित न रहकर एक स्वतंत्र, सचेत और आत्मनिर्णय में सक्षम व्यक्तित्व के रूप में विस्तार ले चुकी हैं। 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा में अभिनीत नारी पात्र आज अपनी चुप्पी तोड़कर आत्मसम्मान के अधिकार और स्वतंत्र पहचान के लिए मजबूती से संघर्ष कर रहे हैं।

रूढ़िवादी परम्पराओं के विरुद्ध सामाजिक परिवर्तनों की आवश्यकता का प्रतिपादन—प्रस्तुत शोध पत्र सामाजिक रूढ़ियों एवं परंपराओं में बदलाव का समर्थन करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि समाज की प्रकृति स्थिर न होकर समय के साथ निरंतर विकासशील एवं परिवर्तनशील होनी चाहिए और सिनेमा भी इस परिवर्तन का प्रभावी माध्यम बन

सकता है। हिंदी सिनेमा में नारीवादी स्त्री विमर्श पर आधारित प्रस्तुत शोध पत्र स्त्री विरोधी परंपराओं और लैंगिक असमानता पर प्रश्न उठाता है और समानता, न्याय, स्वतंत्रता पर आधारित सामाजिक संरचना की आवश्यकता व्यक्त करता हैं।

निष्कर्ष

हिंदी सिनेमा में नारीवाद और स्त्री विमर्श का विकास समाज में हो रहे व्यापक परिवर्तनों का सशक्त प्रतिबिंब है। प्रारंभिक फिल्मों में जहाँ स्त्री को पारंपरिक, त्यागमयी और पुरुष के अधीन दिखाया गया, वहीं 21वीं सदी के सिनेमा में वह आत्मनिर्भर, जागरुक और अधिकारों के प्रति सजग व्यक्तित्व के रूप में उभरी है। यह परिवर्तन केवल फिल्मी कथानकों तक सीमित नहीं, बल्कि सामाजिक सोच में आए बदलाव को भी दर्शाता है।

नारीवादी दृष्टिकोण ने पितृसत्तात्मक संरचनाओं को चुनौती दी है और लैंगिक समानता, स्वतंत्रता तथा सम्मान जैसे मूल्यों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। फिल्मों ने स्त्री के संघर्ष, शोषण और प्रतिरोध को उजागर करते हुए समाज को जागरूक और संवेदनशील बनाने का कार्य किया है।

अतः यह कहा जा सकता है कि हिंदी सिनेमा केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी साधन भी है। स्त्री अस्मिता, स्वायत्तता और समान अधिकारों की स्थापना की दिशा में इसका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो एक न्यायपूर्ण और समानतामूलक समाज के निर्माण में सहायक सिद्ध हो रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कांबले, डॉ. अनिल, मधुर भंडारकर की फिल्मों में स्त्रीवादी मीडिया दृष्टि, शिवालिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016
2. मासूम, डॉ. राही, सिनेमा और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
3. रे, सत्यजीत, अपु के साथ मेरे वर्ष : एक संस्मरण, वाइकिंग प्रेस, नई दिल्ली, 1994
4. चतुर्वेदी, आराधना, पश्चिमी नारीवाद बनाम भारतीय नारीवाद, तरकश, युवा संवाद ब्लॉग, मध्य प्रदेश, 2011
5. अग्रवाल, मदन, हिंदी सिनेमा में नारी चेतना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010
6. सिंह, मीनाक्षी, स्त्री, सिनेमा और समाज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
7. यादव, प्रेमचंद, हिंदी सिनेमा में नारी का बदलता स्वरूप, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
8. श्रीवास्तव, अनिता, स्त्री विमर्श और मीडिया, नवचेतना प्रकाशन, लखनऊ, 2009
9. भारती, सुषमा, सांस्कृतिक अध्ययन और हिंदी सिनेमा, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2011
10. वाजपेयी, अर्चना, हिंदी सिनेमा में स्त्री प्रतिनिधित्व, साहित्य प्रकाशन, वाराणसी, 2020